भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-3, अंक-2-3	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा-20.00
मंगलवार, 12 मार्च' 79	मानद सहसम्पादक: डॉ. महेन्द्र दवे-श्री विमल दवे	प्रति अंक : 2.00

कृपावतार स्वामिश्री सहजानंदजी

सामाजिक अतंत्रता

सहजानंदस्वामी की विशेषता यह थी की उन्होंने एक ओर व्यक्ति के जीवनसुधार के लिये बीड़ा उठाया, व्यक्तिजीवन को आंतर-बाह्य शुद्ध कर दिया, भारतीय उपासना पद्धति सिखाई और मानव-व्यक्तित्व कैसे भगवदीय हो सकता है उसकी पूरी प्रक्रिया व्यक्ति के सामने रख दी तो दूसरी ओर उस काल में समाज में जो अतंत्रता प्रवर्तित थी उसकी ओर भी ध्यानाकर्षण किया।

व्यक्ति-जीवन पर सामाजिक-जीवन का प्रबल प्रभाव पड़ता है। यदि सामाजिक विचारधारा शुद्ध होगी तो व्यक्ति-जीवन शुद्ध होने में देर नहीं लगेगी यह उन्होंने जान लिया। यदि लोग निर्व्यसनी होंगे, वहम-कुरूढि रिवाज आदि से मुक्त होंगे मलिन देव-देवाओं के भ्रामक जाल को तोड देंगे तो आत्मोन्नति के मार्ग पर सरलता से और सहजता से अग्रसर हो सकेंगे यह बात महाराज के मन में स्पष्ट थी। अतः उन्होंने सामाजिक सुधार क्षेत्र में जबरदस्त आंदोलन उठाया।

साधनशुद्धि

प्रजा गरीब थी, आजीविका के साधन नगण्य थे, कानून का उल्लंघन स्वाभाविक हो गया था, मनमाने ढंग से व्यवहार करने में हिचकिचाहट नहीं हो रही थी। वैसे लोग समाज में शापरूप थे। केवल स्थूल बल का प्रयोग करने मेंही काठी कोली आदि जातियां लगी हुई थी और इस सामाजिक अभिशाप के कारण आम प्रजा संतप्त थी। सहजानंदस्वामी ने इस मूल रोग का-विष का प्रतिकार करने में अपनी पूरी ताकत अजमाई। रोग की पहचान तो बहुतों को होती है किन्तु पहचान कर उसको हटाने की क्षमता सब में नहीं होती है और यदि ऐसी क्षमता हो तो भी पूरे कार्यकलाप को व्यवस्थित व्यूह और असाधारण क्षमता से पार उतारने की हिम्मत और शक्ति का अभाव होता है। सहजानंदस्वामी को प्रजा के रोग की परख भी थी और तनिक भी मनो-मालिन्य न हो तीव्रता न हो, केवल प्रेम ही प्रेम हो, इस प्रकार इस रोग के सामाजिक निवारण की क्षमता भी थी

और यह सब उन्होंने सिद्ध कर के दिखला दिया। उन पर प्रहार हुए, उन्होने प्रेम से स्वीकार किया, किन्तु वापसी प्रहार नहीं किये। महाराज के पास सशस्त्र वीर पुरुष थे किन्तु उन सबको संयम का पाठ सिखाया। इस प्रकार अपनी ओर से और अपने वीर पुरुषों की ओर से हिंसा तो क्या, सामने वाले के प्रति मन मुटाव नहीं होने दिया और शुद्धभाव से, प्रेम से और धैर्य से किन्तु निश्चित दृष्टि और सुदृढ़ कार्यप्रणाली से यह कार्य किया। इस प्रकार साध्य तो शुद्ध था ही, किन्तु इस धर्म कार्य में साधन भी शुद्ध होना चाहिए यह बात उन्होंने अपने आश्रितों को, त्यागी संतों को और हरिभक्तों को सिखाई। अतः स्वामिनारायण संप्रदाय के साधु और सत्संगियों का सहनशील आचार-विचार की गरिमा ने प्रजा पर असाधारण प्रभाव छोड़ा और एक उज्जवल, पवित्र और सन्निष्ठ सम्प्रदाय के रूप में स्वामिनारायण सम्प्रदाय की मान्यता हो गई।

नया वातावरण

सहजानंदस्वामी का कार्य वास्तव में अत्यंत कठिन था। लोगों की जड़ में पहुँचे हुए दुर्गुणों से प्रजा को मुक्त करवाना था और ये लोग भी स्थूल, जड़वादी, असंस्कारी थे। दबाव करके निर्व्यसनिक करने की तो बात ही नहीं थी। स्वामिनारायण की पद्धति भी नहीं थी। शुद्ध निर्व्याज, निरपेक्ष प्रेम द्वारा उनके साथ असाधारण आत्मीयता स्थापित करके ही महाराज ने एक नये वातावरण का निर्माण किया। यह वातावरण अपने आप बोल उठा और जड़ता महाराज के प्रेम में पिघल गई और ये लोग महाराज के आत्मीय बन गये। आत्मीय बना कर महाराज को क्या लेना था? उनके ही जीवन शुद्ध, पवित्र, निर्दोष, सद्‌गुणशाली, निर्व्यसनिक और निर्वासनिक बनाना था। सो हो गया और इसके द्वारा एक असाधारण, महनीय, प्रकाशोज्वल चेतना का प्रसार प्रजा में हुआ।

धर्मपरम्परा सामाजिक परम्परा में ओत प्रोत—

भारतीय धर्म-परम्परा में यह एक नया मोड़ था। धर्म-परम्परा समाज में सामाजिक परम्पराओं में ओत-प्रोत हुई और महाराज ने जीवन दान देकर समीप में जो पतित जातियां मानी जाती थी उनको धार्मिक चेतना द्वारा एकदम ऊपर उठाया। इन जातियों के माध्यम से धर्म को भी सम्बल मिला। प्रेम और सम्पूर्ण विशुद्धि द्वारा प्रजा का उत्थान और इस उत्थान द्वारा धर्मजागृति यह एक नई पद्धति थी। इसके द्वारा जो सेवा हुई यह स्वामिनारायण सम्प्रदाय को मानने वाले और न मानने वाले सबने स्वीकार की है और इतिहास में सुवर्णाक्षरों में लिखी गई है।

आजकल जो धर्म का प्रदर्शन, बाहरी दिखावा हो रहा है, यह स्वामिनारायण को कभी मान्य नहीं होता। स्वामिनारायण ने ऐसा बनावटी धर्म प्रदर्शन कभी नहीं किया क्योंकि उनको प्रजा के भीतर में काम करना था। बाह्याचार में विशुद्धि द्वारा समग्र चैतन्य को शुद्ध करना था। अतिशयता जरा भी न हो, 'धर्म-धर्म' का झूठा बाजा न बजे, इसके लिये इन्होंने सर्वत्र मर्यादा रखी है। अतः स्वामिनारायण की असली, स्वाभाविक, सरल धर्मपद्धति प्रजा को मान्य हो गई है।

पंचवर्तमान (Five nots) धर्म का प्रवेश द्वार

धर्म में भी कपट होता है, जड़ता होती है, प्रणालीबद्धता-रूढिवाद, वहम, मिथ्याचार होते हैं। प्रवर्तमान धर्म में ये सब थे, यह सब तोड़ कर महाराज ने ''आचारः प्रथमो धर्मः'' यह सूत्र मानकर वहां से प्रारम्भ किया। स्वामिनारायण ने आचारशुद्धि के लिये पंच वर्तमान की स्थापना कीः- (1) शराब नहीं पीना। (2) मांस नही खाना। (3) चोरी नहीं करनी। (4) व्यभिचार नहीं करना।

(5) वर्णांतर जात्यंकर नहीं करना और नहीं करवाना।

यह पाचं Nots है पंच वर्तमान। स्वामिनारायण धर्म के ये प्रवेशद्वार है। अपने आपको विशुद्ध करके ही यहाँ प्रवेश हो सकता है।

सगुण ब्रह्म की उपासना

दूसरा इन्होंने प्रगट की उपासना का आदेश दिया। स्वामिनारायण निर्गुण ब्रह्म की बात नहीं करते हैं। वे तो प्रगट पुरुषोत्तम की बात करते हैं। यहाँ भक्त और भगवान के बीच दूरी है ही नहीं।

आप के समक्ष ही पुरुषोत्तम है आप के समक्ष ही इनका अक्षरधाम है आपके समक्ष ही अनादि मुक्त संत है। पहचान लो, पकड़ लो, लूट लो, अपना लो और प्रवेश पा लो नित्य, आनंदमय अक्षरधाम में मुक्त हो लो सब बन्धनों से सुख-दुःख से, माया से मृत्यु लोक से और परमानंद में शाश्वत स्थिर हो जाईए। महाराज ने इस पृथ्वी पर स्थायी वास किया। अपना जीवन-कार्य पूर्ण करके इन्होंने स्थूल शरीर की लीला समेट ली किन्तु अपने पीछे एक बहुत बड़ी विरासत खड़ी कर दी और दिव्य चैतन्य को अपने अक्षर, अनादि मुक्तों और सन्तों द्वारा उन्होने जीवों के कल्याण के लिये जो अवतार लिया था यह कार्य जारी रखा। आज भी यह परम्परा सतत चालू है और चालू रहने वाली है। वास्तव में आज भी जीवनमुक्तों और सन्तों द्वारा महाराज स्वयं सर्वजीवहिता वह प्रवृत्ति कर रहे हैं। इनको पहचानने वाले पहचानते हैं और इनके द्वारा परमात्मा का प्रकाश पाते हैं। प्रगट की उपासना स्वामिनारायण सम्प्रदाय की विशेषता है।

हमारी करुणता और स्वानिरायण की विशेषता

हमारे देश की एक करुणता है की जब तक कोई महापुरुष विद्यमान होते हैं तब तक उनका दिव्य वाणी और उनके दिव्य व्यवहार का चमत्कारिक प्रभवा लोक चेतना पर पड़ता है, किन्तु जैसे ही वे विदा होते हैं, तो प्रजा भी शून्यावस्था में आ जाती है। एक विदशी ने एक बार लिखा था की इस प्रजा को देख कर लगता है कि बहुत वर्ष से यहाँ किसी महापुरुष ने जन्म नहीं लिया। महापुरुष के सामर्थ्य से देशकाल में दिव्य परिवर्तन हो और इनके जाने के बाद तुरन्त चैतन्य का झरना लुप्त होने लगे तो महापुरुष के जन्म की सार्थकता कहां? स्वामिनारायण भगवान को यह तथ्य स्पष्ट था। अतः इन्होंने अपनी प्रभुता धारण की हो ऐसे पात्र रख छोडे जिसके द्वारा दिव्य चेतना की कडी अखण्ड रही। मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामी, पू. प्रागजी भगत, पू. जागास्वामी, पू. कृष्णजी अदा, पू. शास्त्रीजी महाराज, पू. योगीजी महाराज द्वारा महाराज ने ही कार्य किया और आज भी इस परम्परा में महाराजा प. पू. काकाजी, पू.पू. पप्पाजी, प.पू. स्वामिजी, प.पू. महंतस्वामिजी जैसी चैतन्य स्वरूप विभूतियां द्वारा कार्य कर रहे हैं। परब्रह्म की यात्रा सतत गतिमान है।

कर्महास द्वारा मुक्ति

क्या कर रहें हे ये चैतन्य स्वरूप? कर्म ह्रास द्वारा मुक्ति। हम सब जानते हैं कि कर्म तीन प्रकार के हैं।

(1) क्रियमाण कर्म (जो हम अभी कर रहे हैं)।

(2) संचति कर्म। (जो कर्म स्टोक में है किन्तु फलने नहीं लगा है।)।

(3) प्रारब्ध कर्म। (जिन कर्मों ने फलना प्रारंभ कर दिया है)।

प्रारब्ध तो सबको भोगना ही पड़ता है चाहे राम हो या कृष्ण, महावीर हो या बुद्ध या सामान्य प्राणी। किन्तु उपर्युक्त जैसे भगवत्स्वरूप सन्त के आश्रय में जाने से संचित, प्रारब्ध में नहीं पलटता है। संचति का क्षय हो जाता है। अतः नया प्रारब्ध नहीं बनता है। परिणाम स्वरूप आश्रित या सेवक काल, कर्म और माया के बन्धन से मुक्त होकर

शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, निर्भय, दिव्य ब्रह्मस्वरूप हो जाता है। हम कर्म (क्रियमाण) करें उसका संचित हो, उसका प्रारब्ध हो उससे क्रियमाण हो यह एक विषचक्र है। कहीं तोड़ना ही पड़ेगा। संचित तोड़ दो तो प्रारब्ध गया, प्रारब्ध गया तो क्रियमाण गया, तो सब बन्धनों से मुक्ति !

महाराज की असाधारण दयालुता

सन्त इतने दयालु होते हैं कि तत्क्षण संचित कर्मों का क्षय करते हैं। सेवक के चैतन्य की सारी जिम्मेदारी सदा सर्वदा अपने सर पे ले लेते हैं, इनकी इच्छा सेवक का प्रारब्ध बन जाती है। यह है प्रेम का सामर्थ्य। स्वामिनारायाण भगवान ने तो अपने आश्रितों को स्पष्ट वचन दिया है–

''में स्वयं आपके अन्तकाल के समय आपको बुलाने के लिये आऊंगा।'' अनुभव प्रमाण है कि उन्होंने यह वचन निभाया है इतना ही नहीं जीव को प्रतीति हो जाय इस प्रकार कहा है, ''अब मस्त रहना, शांति में रहना, अब आपके लिये संसार में आवागमन नहीं रहा।'' यह सब कितना अद्‌भुत है? महाराज कहां तक हमारे साथी हैं। भारतीयों का युगों से आदर्श है जन्म-मरण के चक्कर से मुक्ति। कौन ऐसा प्रेमी होगा, कौन ऐसा दयालु होगा कि हमारा यह जीवनदीप बुझ जाय इसके पूर्व यह आदर्श इतने निश्चय से सिद्ध कर दे? सहजानंदस्वामी की जीवों पर निश्चित महाकरुणा है।

पंच वर्तमान के पालन में महाराज की सहाय।

व्यक्ति और समष्टि के जीवन की आचार शुद्धि से लेकर मुक्ति तक सहजानंदस्वामी साथ खड़े हैं क्योंकि यह सामान्य दिखाई पड़ती आचार-शुद्धि, यह पंच वर्तमान का पालन महाराज की सहाय से ही सिद्ध हो सकता है। अनेक उदाहरण है कि महाराज ने ऐसी परिस्थित पैदा की कि व्यक्ति को लाज आई हो और स्वयं सहज स्वधर्म में रहे हो। यहां मूलू खाचर का प्रसंग लिखना उपयुक्त होगा।

महाराज के समय की वात है। कम्भाला गांव के मूलु खाचर भगवान स्वामिनारायण के दर्शन करने के लिये गढपुर आये थे। प्रथम बार ही दर्शन किया और अत्यंत भाव हुआ। तब सहजानंदस्वामी ने पांच वर्तमान धारण करके सत्संग में प्रवेश करने को कहा। खाचर ने भी सरलता से किन्तु स्पष्ट कहा, ''महाराज, वर्तमान तो लूं, किन्तु मुझे हुक्का पीने का, अफिम खाने का और तम्बाकू का व्यसन है। मैं इन दोनों चीजों को छोड़ नहीं सकता। अतः कैसे वर्तमान लेकर सत्संगी बनूं?'' महाराज ने कहा, 'कोई चिन्ता नहीं, आप यूं करिये, आप मन में व्यसन छोड़ने की इच्छा करना। न छोड़ सको तो कोई आपत्ति नहीं है किन्तु वर्तमान धारण करके सत्संगी हो जाईए।' खाचर को हिम्मत आई और इन्होंने वर्तमान लिया और सत्संग में प्रवेश पाया।

इसके कुछ दिन बाद महाराज और सकल संघ के साथ मूलु खाचर समैया (सत्संगिओं का मिलन) में वडताल जा रहे थे। रास्ते में सब यात्रीगण विश्राम लेने के लिये गांवों के चौराहों में या भोगल में ठहरते थे। जब-जब विश्राम का समय आता था तब मूलु खाचर अपना हुक्का निकालते थे, जलाते थे और मस्ती के कश लेते थे। हर गांव में लोग बड़ी भीड़ में आते थे। यात्रीओं के दर्शन करते थे और टीका भी करते थे की ''और सब स्वामिनारायण सम्प्रदाय के हैं किन्तु यह जो हुक्का गुडगुडाता है वह स्वामिनारायण सम्प्रदाय का नहीं लगता है।'' ऐसी टीका सनुकर खाचर को बड़ा क्षोभ हुआ कि इस हुक्के ने मुझे स्वामिनारायण का आश्रित नहीं होने दिया। तुरन्त हुक्का पटका और कहा, ''आज से हुक्का हराम।''

हुक्का गया तो खाचर खानगी में अफिम और तम्बाकू खा लेते थे। पूरा संघ बडताल पहुँचा वहां गुजरात-सौराष्ट्र के अनेक सत्संगी इकट्ठे हुए है। महाराज ने स्वयं एक दूसरे का परिचय करवाया।

सब प्रेम से एक दूसरे को मिले और परस्पर गांढ़ प्रेमालिंगन देने लगे। किन्तु ''यह तम्बाकू खाने वाला-अफिम खाने वाला सत्संगी नहीं लगता है''- ऐसा जानकर किसी ने मूलु खाचर को आलिंगन नहीं दिया। शीघ्र ही खाचर ने वही ही तम्बाकू और अफिम छोड़ दिये। सहजानंदस्वामी के पास यह बात आई तब इन्होंने मुलू खाचर को पूछा, ''किसके उपदेश से आपने व्यसन छोड़ दिये?'' तब मुलु खाचर ने कहा, ''महाराज'' कुसंगी की टीका से हुक्का छोड़ा और सत्संगी भाईयों की चेतावनी से तम्बाकू और अफीम छोड़े।'' इतना उत्तर देकर फिर कहा, महाराज यहीं अपने साथ लाकर आपने मेरे पर बड़ी कृपा की। मुझे व्यसनों की गुलामी से मुक्त कर आपने मेरा जीवन सुधार दिया। और मूलुभा ने यूं कहकर महाराज के चरण पकड़ लिये। निश्चित परमात्मा और परमात्मा के स्वरूप संत के लिये निश्चित कह सकते हैं, ''कामील-काबील सब हुन्नर तेरे हाथ।''

पंच वर्तमान पालन करने का लाभ

कहने का तात्पर्य यह है कि परमात्मा की कृपा हो तो पंच वर्तमान स्वयं देते हैं और स्वयं पालन भी करवाते हैं। तब यह व्रतपालन बंधन रूप नहीं लगता है, स्वाभाविक बन जाता है, भार रूप नहीं उपकार रूप लगता है। इन के पालन से वृत्तियाँ बदलती है। हमारा क्रियाकलाप बदलता है। हां, प्रलोभन या डर से नहीं, समझ से और दृढ निश्चय से वर्तमान का पालन करना चाहिए। वर्तमान धारण कीजिए और सदा वर्तमान रहिए, इतना इस में बल है।

पंच वर्तमान एक शाश्वत तत्त्व

कितने ही वर्ष वीत गये किन्तु वर्तमान में अंतर नहीं हुआ। कितने ही वर्ष बीत जायेंगे वर्तमान में अन्तर नहीं होने वाला है। समय-समय की परिस्थिति अनुसार वर्तमान अनुकूल हो सकता है, इसकी शब्दावलि में अंतर पड़ सकता है। इसकी संख्या में वृद्धि-ह्रास हो सकता है किन्तु तत्त्व दृष्टि से वर्तमान का मूल्य जो है वह ही रहंगा। वर्तमान धारण कीजिए और सत्संग के बुलन्द दरवाजे में प्रवेश कीजिए। पुरुषोत्तम या पुरुषोत्तम स्वरूप संत को प्रेम कीजिए और कर्म के बन्धनों से मुक्ति पा लीजिए।

—क्रमशः

Eternal Truth and It's Realisation

Right from bygone ages, when an intelligence or so to say the mind developed from the animal kingdom, man has started enquiring about the external forces, the powers of the nature, the invisible working system of nature which could not be comprehanded by the mind. Some worked out on fear and some on selfishness. However, there have been some avatar purush, who taught this lesson of the permanent, , eternal element in all beings-aniamte and inanimate, Men like Budha, Mahavira, Kabira, Rama, Krishna have been known as avataras-as fully realised souls-emancipated souls, who could also lead to emancipation of those persons who come in their contact.

Various phases also develped with the different methods and approaches towards this ultimate reality. They are known as various Yogas like Hath Yoga, Raj Yoga, Laya Yoga, Bhakti Yoga, Gyan Yoga and Yoga of Surender etc. However,

without going into all these details, we are merely concerned here with the search for eternal truth and self-realisation in its true form and spirit. How could it be attained? how should one know that one has reached his destination-that he has now ended the journey of the soul-the wanderings from the innumerable births has ended or that he is a liberated soul entirely free and fully dedicated to the right cause and action prompted by supramental power or divinity or God. According to Lord Swaminarayana and according to Gita this is a special type of knowledge known as "Brahmvidya" which is said in Upanishadas as the eternal knowledge of Brahman or Parabrahman, which can be gained in two ways:-

(a) By personal efforts-tapasya, rigorous exercises, disciplines, meditation, prayer and Yoga.

(b) The other is the way of surrender-a path of surrender. Like the cat's kid the divine mother or Sadguru opens the door of salvation or freedom from the bondage of Sattva, Rajas, Tamas the three modes of nature. It is known as Nirwan or Moksh or final emancipation of the soul or sacchidananda swarup.

The first path as Gitakar says, of devotion and Upasana or worship of Akshar Brahman is most difficult. The other path-the unconditionl surrendering to God and the revelation or inspiration from the divine power of the master generally ends into the search for the eternal known as 'Atma' and the 'Jivatma' attains that realisation as oneness and the equivialance with God, thus permananently residingin the kingdom of heaven as liberated soul or emancipated soul or Jivanmukta. These places are known as -in Jainism it is known as 'Siddhashila', in Vaishnavism as 'Golok' to the Bhaktas or Krishna and for Rama it is known as 'Baikuntha' and to the followers or satsangis of Swaminarayana it is know as 'Akshardhama'. These are the eternal abodes of states of the soul where Jivanmukta and the Supreme power permanently reside, This is borne out by the Upanishadas, Gita, Bhagvata and Vachnamrit by Lord Swaminarayana. This is also borne out by the enlightened souls, who have menifested as Avataras on this earth as Budha, Mahavira, Rama, Krishna, Swaminarayana etc. The Supremely realised saints also bear testimony to this sort of realisation known as Nirvikalpa Samadhi or contentless consciousness or attributeless consciousness or pure consciousness. Science cannot explain you this phenomenon because it is beyond mind and intelligence, beyond mind and matter and concerned with the spirit-with the soul-with the consciousness. The upanishadas have described this as the knowledge of Brahman. It is such a stae of the mind which gives you eternal bliss and the swaroop is known as sat-chitt-anand swaroop, not after death but in this very life itself. In Tantra it is based on total vision accepting the whole of life and the

destination or the search of the soul ends into realisation of sacchidanand swaroop, beyond all dualities, conficts and all three modes of nature. It is also known as self-realisation or 'Brahmisthiti' and one enjoys the bliss and also liberation in this life, in all respects and actions. In the last stage the liberated soul shares with the other fellowmen and enjoys the added happiness bliss and power with the divine actions prompted by the supreme power who controls, sustains and distroys the world by three activites or powers or shaktis for governing the world in a harmonious equvibalanced manner. The whole cycle of begining development and dissolution goes on. And here the question arises, which has to be solved je. what is the menaing and purpose of this life? What is the real nature of the soul, the permanent element?

The visionaries and Rishis have answered it, they say-creativity is life. God or the Almighty power has created this would-this universe giving chances to the human beings, who are ignovant of their own self or have forgotten their own real Being and with the working in this world those souls are purified in the company and association of the realised saints or sadgurus known as 'Brahmanishtha and shrotriya sadguru' and they got illumination or awakening or enlightement which is now known as self realisation and the search for the eternal truth ends here. The whole process of creativity goes on and the will or the desire of the creator is ever continuosly fulilled and also transcended into further progressive evolution. It is infinite and unattainable, but through the realised saints or enlightened souls it becomes altainable and realisable in this life. This sort of search and destination can be altanined by any truth seeker in the company of the real sadguru and those qualities of sadguru have been already given in the religious scriptures. By the grace of Real Gurudev and by the blessings of the Gurudev, if one has the pure heart and the open mind, one can surely attain it.

Actually there is no question of such search, because 'Jivatma' itself has the eternal power. Actually he has to search within and go deeper and deeper and deeper and when he becomes thought less, desireless and egoless, then an awakened and illuminated state of mind arises and one can feel, experience and also realise the eternal truth-call it 'Atma' or 'Brahman'. Real Guru's working is to enable the Sadhaka to look within to introspect himself and to experience what he is aleady as the eternal entity.

The Gurudev becomes the pathfinder and more the openness of the sadhaka, the easier is the path of such realisation. In Swaminarayana philosophy the Spiritual hierarchy is continuously maintained and the real qualities of the Sadguru have been also exposed for the truth seekers without any distinction of cast, creed, colour or country. The only question remains whether the sadhaka really wants mental peace and God

Regd. No. D (D) 655

realisation. Nintynine percent of the sadhakas want something else and then God-realisation. Otherwise if there is the sun then there is always light, there cannot be darkness, if you have open eyes and no hurdles in-between the eyes and the sun. In the same way if there's a satpurusha and the sadhaka with the zest, indomitable faith and intense aspiration to realise the truth alone then with that sort of inner awakening those clouds-even the dark clouds of vasna and crude nature will vanish of, with the help of the sadguru and one becomes emancipated soul. One is already Jivanmukta but he has forgotten that knowledge and has to regain it in his original swaroopa with the help of the sadguru. The supramental power ever remains transcending beyond and beyond all the universes and all the shaktis. This is the final message of Gita and the essence of Gita is the creative surrendering to Lord Krishna or Satprursha. Here ends then-in the last shloka of Gita-the search for truth, the unique spiritual experience of the eternal element of God-realisation. It is now also easy in the company of Pujya Pappaji and Pujya Swamiji.

May God bless you all for such self and supreme realisation 'Thous art that' then becomes a reality in this life. One then attains the total vision of trio into one, and one into trio-i.e. he sees God in himself, in the universe and all as God's Swaroopas with divine vision of ''वासुदेवः सर्वम् इति।''

Statment about ownership & other particulars about newspaper

THE DIVINE GRACE'

(Form IV Rule 8)

1. Place of Publication : Yogi Divine Society, A-103, Ashokvihar-III, Delhi-110 052
2. Periodicity of its Publication : Monthly
3. Printer's Name : Sadhu Mukund jivandas
   Nationality : Indian
   Address : Yogi Divine Society A-103, Ashokvihar-III Delhi-110 052.
4. Publisher's Name :
   Nationality : As above
   Address :
5. Editor's Name :
   Nationality : As above
   Address :
6. Owner's Name :
   Nationality : As above
   Address :

I, sadhu Mukundjivandas, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

-Sadhu Mukundjivandas

Signature of Publisher

Date : 12th March' 79